पंचम अध्याय
नीरज की ग़ज़लों का
शिल्पविधान

पंचम अध्याय
नीरज की ग़ज़लों का शिल्पविधान

प्रास्ताविक :-

दिल का दर्द लफ्जों में बयान करना और पीड़ितों की वेदना को अपने एहसास के जरिये बताना जिनकी पहचान मानी जाती है, ऐसे महान ग़ज़लकार नीरज जी की ग़ज़लों का शिल्पविधान प्रस्तुत करना इस अध्याय का उद्देश्य है। चन लफ्जों में हालात बयान करना और कम समय में लोगों के दिलों - दिमागपर छा जाना कवि नीरज जी की विशेषता मानी जाती है। मिलन से लेकर विरह तक, समस्या से लेकर समाधान तक और इन्सान से लेकर इन्सानियत तक उनकी ग़ज़लें अपना प्रभाव दिखा चुकी हैं। ऐसे में ग़ज़लों का शिल्पविधान देखते समय उनकी ग़ज़लों की भाषा, उनकी ग़ज़लों में रदीफ - काफिया और संगीतात्मकता की चर्चा करना आवश्यक बन जाता है। नीरज जी की ग़ज़लों की भाषा न तो पूरी तरह से हिन्दी है और न ही पूरी तरह से उर्दू। अब उनकी भाषा का मर्म जानने के लिए शिल्पविधान देखना जरूरी हो जाता है।

5.1 नीरज की ग़ज़लों का शिल्पविधान :-

कवि नीरज जी की ग़ज़लों का शिल्पविधान पाठकों को खासा प्रभावित करता रहा है। उनकी ग़ज़लों की भाषा सरल, सहज, स्वाभाविक है लेकिन ग़ज़लों में प्रयुक्त शब्द, प्रसंग, लोकोक्तियाँ और मुहावरे, वातावरण देखकर आम आदमी को यह एहसास हो जाता है कि, इसमें जो बात कही है, वह तो अपनी बात है। नीरज जी की ग़ज़लों का शिल्पविधान स्पष्ट करनेवाली बातें हैं' - नीरज की ग़ज़लों की भाषा, नीरज की ग़ज़लों में रदीफ - काफिया और नीरज की ग़ज़लों में संगीतात्मकता। इनकी विश्लेषणपूर्वक जानकारी इसप्रकार से है -

5.1.1 नीरज की ग़ज़लों की भाषा -

अपने विचारों को लिखित रूप में व्यक्त करने का माध्यम भाषा है। जब विचार गद्य स्वरूप में होते हैं तो उन्हें पाठ के रूप में देखा जाता है और वही विचार जब पद्य स्वरूप में होते हैं तो उन्हें काव्य के रूप में देखा जाता है। काव्य का क्षेत्र काफी व्यापक है। ग़ज़ल यह काव्य का एक अंग है। काव्य के एक निश्चित ढाँचे में विचारों को व्यक्त करना ही ग़ज़ल का सृजन करना है। कवि ने अपनी ग़ज़लों में मर्मस्पर्षी विषयों को प्रकट किया है। कम लफ्जों का प्रयोग करके अधिक जानकारी देना यह नीरज जी की भाषा की विशेषता है।

अपनी भाषा के बारे में कवि नीरज जी ने स्वयं कहा है कि - " मेरी भाषा के प्रति लोगों की शिकायत रही है कि न तो वह हिन्दी है और न उर्दू। उ़नकी यह शिकायत सही है और इसका कारण यह है कि मेरे काव्य का जो विषय 'मानव प्रेम' है उसकी भाषा भी इन दोनों में से कोई नहीं है। हृदय में प्रेम सहज ही अंकुरित होता है और वह जीवन में सहज ही हमें प्राप्त होता है। जो सहज है

उसके लिए सहज भाषा ही अपेक्षित है। असहज भाषा में यदि वह कहा जाएगा तो अनकहा ही रह जाएगा। प्रत्येक समाज की एक सहज भाषा होती है। मैं जिस समाज में रहता हूँ उस समाज की सहज भाषा वही है जिसमें मैं कविता लिखता हूँ। जो विषय असहज हैं उनके लिए मैंने भी असहज भाषा का ही प्रयोग किया है। "[1]

कई प्रसंग इस प्रकार से घटित हो जाते हैं कि सहज भाषा नें उनका वर्णन किया जाता है और वह वर्णन सीधा दिलों - दिमाग पर छा जाता है या फिर दिल में दस्तक देता है, जिनकी भाषा सहज है और अपना प्रभाव डालने में शत प्रतिशत कामयाब भी। इसीका एक उदाहरण है यह ग़ज़ल -

"रंग ऋतु के बदल गये होंगे
वो जिधर से निकल गये होंगे।
रात बाजार में अंधेरा था
खोटे सिक्के भी चल गये होंगे।
तुमसें होकर जुदा सभी आँसू
गीतों-ग़ज़लों में ढल गये होंगे।
वो नज़र जिस तरफ़ उठी होगी
गिरने वाले सँभल गये होंगे।
ज़िक्र नीरज का जब हुआ होगा
कितने ही लोग जल गये होंगे।"[2]

कवि ने अपनी ग़ज़लों में हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं के शब्दों का प्रयोग किया है मगर उर्दू के शब्द काफी कम मात्रा में हैं और जिनका प्रयोग किया गया है वह अधिकतर हिन्दी में इस्तेमाल किये जाते हैं। जिस प्रकार अंग्रेजी शब्दों का हिन्दी में प्रचलन है ठिक उसी प्रकार उर्दू शब्दों का प्रचलन होना भी स्वाभाविक बात है। अतः नीरज जी की ग़ज़लों को हम उर्दू से प्रभावित नहीं कहेंगे। साथ ही उर्दू के शब्द अपना प्रभाव दिखाने में माहीर हैं अतः उनका प्रयोग हिन्दी भाषा के ढंग के अनुसार किया जाना अनिवार्य है।

'जहाँपर असहज विषय आयेगा मैं भी असहज भाषा का प्रयोग करूँगा, यह कवि नीरज जी का मानना है। मगर उनकी ग़ज़लों का अध्ययन करने के बाद एक बात ध्यान में आ जाती है कि, उनके लिए कोई भी विषय असहज नहीं है और उनकी किसी भी ग़ज़ल की भाषा असहज नहीं है। अगर कोई ग़ज़ल समझने में थोडी - बहूत कठिनाई आती है, तो उसका कारण है, उर्दू के कुछ शब्द। अतः नीरज जी की ग़ज़लों की भाषा को असहज कहना याने उनके साथ अन्याय करना है। उनकी एक ग़ज़ल जो मुझे समझने में थोड़ी कठिन महसूस हुई।

"बात अब करते हैं क़तरे भी समन्दर की तरह।
लोग ईमान बदलते हैं कलेण्डर की तरह।
बस वही लोग बचा सकते हैं इस कश्ती को
डुब सकते हैं जो मँझधार में लंगर की तरह।
मैंने ख़ुशबू सा बसाया था जिसे तन - मन से

मेरे पहलू में वही बैठा है ख़ंजर की तरह।
मेरा दिल झील के पानी की तरह काँपा था
तुमने वो बात उछाली थी जो कंकर की तरह।
जिनकी ठोकर से क़िले काँप के ढह जाते थे
कल की आँधी में उड़े लोग वो छप्पर की तरह।
तुझसी शोहरत न किसी को भी मिले ऐ 'नीरज'
फूल भी फेंके गये तुझ पै' तो पत्थर की तरह।" [3]

दिनेश शुक्लजी के हिंदी ग़ज़ल की भाषा के बारे में विचार हैं कि - " हिंदी ग़ज़लकार जिस प्रकार अपने लेखन में काव्य - वस्तु के चुनाव में सजगता बरसता है, ठीक उसी प्रकार वह अपनी भाषा के प्रयोग में भी बेहद सावधानी बरतता है। भाषा वह सेतु है जहाँ से गुज़रकर रचनाकार पाठक से संवाद बनाता है। यदि किसी रचना में उसका कथ्य, उसकी विषय - वस्तु कितनीं भी समयगत सच्चाइयों से जुड़ी हुई क्यों न हो, पर रचनाकर कथ्य के अनुरूप भाषा, प्रतीकों एवं बिंबों का इस्तेमाल नहीं कर रहा है, तो वह रचना नीरस हो जाएगी। या बेहद कठिन एवं दुरूह भाषा का प्रयोग कर रहा है, तब भी वह रचना अपने आपमें पाठक से संवाद नहीं बना पाएगी। भाषा संप्रेषण का एक मूल विधायक तत्व है। वर्तमान समय में कविता का मूल संवाद जो अपने पाठक एवं श्रोताओं से टूटा है, इसके मूल में मुख्य रूप से भाषा ही है।हिंदी ग़ज़लकार भाषा के पक्ष को लेकर बेहद सजग है। " [4]

किसी भी ग़ज़लकार को यदि सफलता प्राप्त करती है, तो इन बातों को ध्यान में रखना होगा। और ध्यान देने योग्य बात यह है कि, इन बातों का पालन नीरज जी ने अपनी ग़ज़लों में किया है।

"अब के सावन में शरारत ये मेरे साथ हुई,
मेरा घर छोड़ के 'कुल शहर में बरसात हुई।
आप मत पूछिये क्या हम पे' सफर में गुज़री ?
था लुटेरों का जहाँ गाँव वहीं रात हुई।
ज़िन्दगी - भर तो हुई गुफ़्तगू ग़ैरों से मगर
आज तक हमसे हमारी न मुलाकात हुई।
हर ग़लत मोड़ पे' टोका है किसी ने मुझको
एक आवाज़ तेरी जब से मेरे साथ हुई।
मैंने सोचा कि मेरे देश की हालत क्या है
एक कातिल से तभी मेरी मुलाकात हुई। " [5]

ग़ज़ल में प्रतिकात्मक भाषा का प्रयोग करना आम बात मानी जाती है। मगर आम बात जब प्रतिकात्मक ढंग से पेश की जाती है, तब उसका महत्व अनन्य साधारण रहता है। नीरज जी ने इस ग़ज़ल में मौसम, रिश्ते, हालात, जीवन आदि का प्रतिकात्मक वर्णन किया है। इससे निकलनेवाला निष्कर्ष अपने आप में एक क्रांति है। इसे हम कह सकते है कि, सौ सुनार की और एक लोहार की। जब अन्य ग़ज़लकारों ने इस विषय को सकारात्मक ढंग से प्रस्तुत किया, तब उसे अनदेखा किया गया। मगर नीरज जी ने जब यही विषय नकारात्मक ढंग से सामने रखा, तो

इसका स्वागत तालियों के साथ हुआ। यही ग़ज़ल की प्रतिकात्मक भाषा की सार्थकता है।

"गगन बजाने लगा जल - तरंग फिर यारो।
कि भींगे हम भी ज़रा संग - संग फिर यारो।
यह रिमझिमाती निशा और ये थिरकता सावन
है याद आने लगा इक प्रसंग फिर यारो।
किसे पता है कि कब तक रहेगा ये मौसम
रखा है बाँध के क्यों मन - कुरंग फिर यारो।
कहीं प' कजली कहीं तान उठी बिरहा की
हृदय में झाँक गया इक अनंग फिर यारो।
पिया की बाँह में सिमटी है इस तरह गोरी
सभंग श्लेष हुआ है अभंग फिर यारो।
जो 'रंग' गीत का 'बलबीर' जी के साथ गया
न हमने देखा कहीं वैसा 'रंग' फिर यारो।" [6]

उपर्युक्त ग़ज़ल में कवि ने सरस संगीतमय भाषा का प्रयोग किया है। कहीं पर दो दिलों के मिलने के आसार दिखाई देते हैं तो कहीं पर संगीत की मधुर ध्वनि। प्रतीक के रूप में गगन, निशा, श्लेष, रंग आदि का प्रयोग किया गया है। संपूर्ण ग़ज़ल में आनंदमय वातावरण दिखाई देता है।

"समय ने जब भी अँधेरों से दोस्ती की है,
जलाके अपना ही घर, हमने रोशनी की है।
सुबूत हैं मेरे घर में धुएँ के ये धब्बे,
कभी यहाँ प' उजालों ने ख़ुदकुशी की है।
कभी भी वक़्त ने उनको नहीं मुआफ़ किया
जिन्होंने दुखियों के अश्कों से दिल्लगी की है।
जली हैं आग में जब - जब भी शहर की सड़कें
मेरे ही पाँव के छालों ने कुछ नमी की है।
'किसी के जख़्म को मरहम दिया है गर तूने
समझ ले तूने ख़ुदा की ही बंदगी की है।" [7]

प्रस्तुत ग़ज़ल में कवि ने सुसंस्कृत एवं नागरिक भाषा का प्रयोग किया है। इस भाषा की विशेषता यह है कि, जिम्मेदार नागरिक के विचार इसमें दृष्टिगोचर हो जाते हैं। साथ ही सुसंस्कृत व्यक्ति के कर्तव्य भी झलक पडते हैं। पाठकों के मन को छूने में यह भाषा सफल हो जाती है। साथ ही अच्छे कार्य की प्रेरणा देने के लिए इसका प्रयोग अनिवार्य माना जाता है। एक सुसंस्कृत राष्ट्र की भाषा के रूप में भाषा का यह रूप जाना जाता है। आदर्श नागरिक बनाना, इस भाषा के रूप का प्रथम कार्य है।

"अब तो मज़हब कोई ऐसा भी चलाया जाये
जिसमें इन्सान को इन्सान बनाया जाये।

जिसकी ख़ुशबू से महक जाये पड़ोसी का भी घर
फूल इस क़िस्म का हर सिम्त खिलाया जाये।
आग बहती है यहाँ गंगा में झेलम में भी
कोई बतलाये कहाँ जाके नहाया जाये।
मेरे दुख - दर्द का तुझ पर हो असर कुछ ऐसा
मैं रहूँ भूखा तो तुझसे भी न खाया जाये।
जिस्म दो होके भी दिल एक हों अपने ऐसे
मेरा आँसू तेरी पलकों से उठाया जाये।" [8]

उपर्युक्त भाषा को लोकभाषा के रूप में जाना जाता है, जो ग़ज़ल के क्षेत्र में काफी प्रभावी साबित हो रही है। इसमें वातावरण एवं संस्कृति का प्रभाव दिखाई देता है। इस ग़ज़ल में कवि ने तत्कालिन वातावरण का चित्रण करते हुए धार्मिक दंगे - फसाद का कारण बतलाने का प्रयास किया है। साथ ही संस्कृति के लिए यह किसप्रकार हानीकारक है यह समझाकर शांति का संदेश दिया है। लोकभाषा को शांति का द्योतक माना जाता है।

"जागते रहिए ज़माने को जगाते रहिये
मेरी आवाज़ में आवाज़ मिलाते रहिये।
वक़्त के हाथ में पत्थर भी है और फूल भी है
चाह फूलों की है तो चोट भी खाते रहिये।
जाने कब आख़िरी ख़त आपके नाम आ जाये
आपसे जितना बने प्यार लुटाते रहिये।
प्यार भी आपको हो जायेगा रफ़्ता - रफ़्ता
दिल नहीं मिलता तो नज़रें मिलाते रहिये।
क्या अजब है कि समय फिर से मिला दे हमको
टूट जाने प' भी रिश्तों को निभाते रहिये।
आपसे एक गुज़ारिश है यही नीरज की
भूले भटके ही सही घर मेरे आते रहिये।" [9]

इस ग़ज़ल की भाषा को माधुर्य गुण संपन्न भाषा कहा जाएगा। क्योंकि इस ग़ज़ल में माधुर्य भाव ही वहन होता है। कुछ देने का नरम एहसास और कुछ पाने की मधुर अनुभूती इस भाषा का अस्तित्व है। प्रेम पक्ष में से मिलन पक्ष का वर्णन इसमें आ जाता है क्योंकि विरह पक्ष में तो दुःखानुभूति होती है। एक प्रकार की टीस, पीड़ा व्यक्त की जाती है, जो पाठकों के हृदय को भी घायल कर देती है। और भावनाशिल पाठकों के आँखों से आँसू भी निकल आते हैं। इसकारण विरह वर्णन के लिए इस भाषा के रूप का प्रयोग नहीं किया जाता।

अब तक हमने कवि नीरज जी की ग़ज़लों में प्रयुक्त भाषा के विविध रूप देखे हैं। जिनकी विविधता के कारण ग़ज़ल का प्रभाव अधिक प्रखर बनता है। इनकी भाषाशैली के बारे में डॉ. दुर्गा शंकर मिश्र जी के विचार भी महत्वपूर्ण हैं - " यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो नीरज के काव्य में शैलीगत वैविध्यता के भी दर्शन होते है और उनकी काव्य कृतियों में विविध शैलियों का सफल प्रयोग हुआ हैं

जिनमें से निम्नलिखित प्रमुख हैं -

1) भावात्मक शैली, 2) चित्रात्मक शैली, 3) वक्तात्मक शैली, 4) प्रतीकात्मक शैली, 5) अलंकारिक शैली, 6) बिम्बात्मक शैली, 7) परिचयात्मक शैली, 8) पत्र शैली एवं, 9) लोक गीतात्मक शैली। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि कहीं कहीं उक्त शैलियों में से कुछ का समन्वित रूप भी दीख पड़ता है और किसी - किसी शैली के उदाहरण संख्या में न्यून ही हैं। उदाहरणार्थ लोक गीतात्मक शैली के उदाहरण अधिक नहीं हैं पर जो भी हैं उनमें मधुरता अवश्य दृष्टिगोचर होती है।" [10]

इसप्रकार हमने कवि नीरज जी की ग़ज़लों की भाषा का अध्ययन किया है। ग़ज़लों की भाषा से हम जान सकते है कि, कवि के विचार कितने ताकतवर हैं। और समाज के साथ कवि कितना जुड़ गया है। नीरज जी के बारे में कुछ कहना याने छोटा मुँह बड़ी बात कहने के बराबर है। क्योंकि जिन्होंने ग़ज़ल को उर्दू से हिंदी में लाया, उनकी ग़ज़लों की भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करना याने चिंटी द्वारा पहाड़ उठाने के बराबर है। फिर भी मैं कोशिश करुंगा की कवि नीरज जी के कार्य के साथ पूरी तरह से इन्साफ किया जाए।

अपनी ग़ज़लों से लाखों चाहनेवालों का निर्माण करनेवाले कवि नीरज जी अपनी भाषा में गुढ़ की मिठास रखते हैं। साथ ही प्रसंग के अनुरूप भाषा को कोमल और कठोर बना देते हैं। आम आदमी की पीड़ा का वर्णन करते समय उनकी भाषा मोम की तरह कोमल बनती है, तो अन्याय - अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाते समय वही भाषा वज्र सी कठोर बन जाती है। प्रेम के वर्णन में उनकी भाषा में सुगंध की अनुभूती होती है, तो दूनिया का असली रूप दर्शाते समय उसी भाषा का कार्य मरहम जैसा कार्य करता है,तो विध्वंसों का चित्रण करते समय वही भाषा लाव्हा सा उग्र रूप धारण कर लेती है। अगर कवि की भाषा में ऐसी ताकत है, तो उनकी ग़ज़लों को बारूद का ढेर कहना भी गलत नही है। मगर वह बारूद है गलत विचारों के लिए और गलत व्यक्तियों के लिए। सामान्य जनता के लिए तो वह हृदय का स्पंदन था, स्पंदन है और हमेशा स्पंदन ही रहेगा।

नीरज जी की ग़ज़लों की भाषा उनकी पहचान है। वे अगर मुरत बनाने का साहस रखते हैं, तो उनकी भाषा उस मुरत में जान डालने का सामर्थ्य रखती है। दोनों एक दूसरे में ऐसे घुल - मिल गए हैं कि, दोनों को अलग करना मुश्किल है। अपने कार्य में लिन होकर दूनिया को भूल जाना उनकी आदत है। इसीलिए उन्होंने कहा है -

"... कि दूर - दूर तलक एक भी दरख़्त न था,
तुम्हारे घर का सफ़र पहले इतना सख़्त न था।
हम इतने लीन थे तैयारियों में जाने की
वो सामने थे, उन्हें देखने का वक़्त न था।" [11]

5.1.2 नीरज की ग़ज़लों में रदीफ - काफिया -

ग़ज़ल का अध्ययन करते समय रदीफ और काफिया अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि रदीफ और काफिया न हो, तो उसे ग़ज़ल नहीं कहा जाएगा। वह कुछ और ही है। इसी कारण कवि नीरज जी की ग़ज़लों में रदीफ और काफिया देखना जरूरी बन जाता है। अब हम रदीफ और काफिया की जानकारी लेंगे और नीरज जी की ग़ज़लों में उनका कहाँ - कहाँ प्रयोग किया गया है यह देखेंगे।

5.1.2.1 काफिया :-

"काफिया शब्द 'फ्कू' से बना है, जिसका अर्थ है - पुनः - पुनः, बार - बार। अर्थात् वह अक्षर या अक्षर समूह जो बार-बार शेरों में आकर शेरों को ग़ज़ल के सूत्र में बाँधता है, उसे काफिया कहतें हैं।

डॉ. नरेश ने काफिये को परिभाषित करते हुए लिखा है, 'ग़ज़ल के शेरों में रदीफ से पहले आनेवाले उन शब्दों को काफिया कहते हैं, जिनके अंतिम एक या एकाधिक अक्षर स्थायी होते हैं और उनसे पूर्व का अक्षर चपल होता है।'

डॉ. रोहिताश्व अस्थाना के मतानूसार 'काफिया का तात्पर्य तुक से होता है। ग़ज़ल के शेरों में रदीफ से पहले जो अन्त्यानुप्रास - युक्त शब्द आते हैं और जिनका प्रयोग तुक मिलाने की दृष्टि से किया जाता है, काफिया कहलाते हैं।" [12]

"हम तेरी चाह में ऐ यार। वहाँ तक पहुँचे
होश ये भी न जहाँ है कि कहाँ तक पहुँचे।
इतना मालूम है ख़ामोश है सारी महफ़िल
पर न मालूम ये ख़ामोशी कहाँ तक पहुँचे।
वो न ज्ञानी, न वो ध्यानी, न बिरहमन, न वो शेख़
वो कोई और थे जो तेरे मकां तक पहुँचे।
सदियों - सदियों न वहाँ पहुँचेगी दुनिया सारी
एक ही घुँट में मस्ताने जहाँ तक पहुँचे।
एक इस आस पे अब तक है मेरी बन्द जुबाँ
कल को शायद मेरी आवाज़ वहाँ तक पहुँचे।" [13]

प्रस्तुत ग़ज़ल में वहाँ, कहाँ, मकां, जहाँ काफिये हैं। इनमें 'आं' स्थायी अक्षर है। और उससे पूर्व के सभी अक्षर चपल अक्षर हैं।

5.1.2.2 रदीफ :-

"शब्दकोश में रदीफ का अर्थ है - 'पीछे चलने वाली'। पारिभाषिक रूप में वह अक्षर, शब्द या शब्द समूह रदीफ होती है, जो किसी ग़ज़ल के प्रत्येक शेर में, काफिये के पीछे लगातार दोहरायी जाती है।

अर्थात रदीफ काफिये के बाद आती है और वह प्रत्येक शेर में अपनी जगह पर स्थिर रहती है। कभी बदलती नहीं। अतः ग़ज़ल के शेरों के अन्त में जिन शब्द - समूह की या शब्द की पुनरावृत्ति पाई जाती है, उसे रदीफ कहते हैं।" [14]

"आदमी ख़ुद को कभी यूँ भी सज़ा देता है
रोशनी के लिए शोलों को हवा देता है।
ख़ून के दाग़ हैं दामन प' जहाँ सन्तों के
तू वहाँ कौन से 'नानक' को सदा देता है।
एक ऐसा भी वो तीरथ है मेरी धरती पर
क़ातिलों को जहाँ मन्दिर भी दुआ देता है।
मुझको उस वैद्य की विद्या प' तरस आता है
भूखे लोगों को जो सेहत की दवा देता है।
साँस के बोझ से जब रूह तड़प उठती है
वो तेरा प्यार है जो दिल को हवा देता है।" [15]

इस ग़ज़ल में 'देता है' शब्द - समूह रदीफ के रूप में प्रयुक्त हुआ है। अगर ग़ज़ल में रदीफ न हो, तो उसे 'गैर - मुरद्दफ ग़ज़ल' कहा जाता है। इसप्रकार हम ग़ज़ल में रदीफ और काफिया पहचान सकते हैं। अब हम कवि नीरज जी की ग़ज़लों को देखेंगे, जिनमें रदीफ और काफिया प्रयुक्त हैं।

"जब चले जाएँगे हम लौट के सावन की तरह,
याद आएँगे प्रथम प्यार के चुम्बन की तरह।
जिक्र जिस दम भी छिड़ा उनकी गली में मेरा,
जाने शरमाए वह क्यों गाँव की दुल्हन की तरह।
मेरे घर कोई ख़ुशी आती तो कैसे आती ?
उम्र भर साथ रहा दर्द महाजन की तरह।
कोई कंघी न मिली, जिससे सुलझ पाती वह,
ज़िन्दगी उलझी रही, ब्रह्म के दर्शन की तरह।
दाग़ मुझमें है कि तुझमें यह पता तब होगा,
मौत जब आएगी कपड़े लिए धोबन की तरह।
हर किसी शख़्स की क़िस्मत का यही है किस्सा,
आए राजा की तरह, जाए निर्धन की तरह।" [16]

उपर्युक्त ग़ज़ल में काफिये के रूप में सावन, चुम्बन, दुल्हन, महाजन, दर्शन, धोबन, निर्धन का प्रयोग हुआ है। इनमें 'अन' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'की तरह' इस शब्द - समूह का प्रयोग हुआ है।

"एक जुग बाद शबे - ग़म की सहर देखी है
देखने की न थी उम्मीद मगर देखी है।
जिसमें मज़हब के हर इक रोग का लिक्खा है इलाज
वो किताब हमने किसी रिन्द के घर देखी है।
ख़ुदकुशी करती है आपस की सियासत कैसे
हमने ये फ़िल्म नई खूब इधर देखी है।
दोस्तों ! नाव को अब खूब सँभाले रखियो।

हमने नज़दीक ही इक ख़ास भँवर देखी है।
जो उठाती थी न सर अपने बड़ों के आगे
हमने तहज़ीब वो अब तो न इधर देखी है।
तुम समझ जाओगे क्या चीज़ है भारतमाता
तुमने बेटी किसी निर्धन की अगर देखी है।" [17]

प्रस्तुत ग़ज़ल में काफिये के रूप में सहर, मगर, घर, इधर, भँवर, अगर का प्रयोग हुआ है। इनमें 'अर' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'देखी है' इस शब्द - समूह का प्रयोग किया गया है।

"तेरा बाज़ार तो महँगा बहुत है
लहू फिर क्यों यहाँ सस्ता बहुत है।
न पीछे से कभी वो वार करता
वो दुश्मन है मगर अच्छा बहुत है।
नहीं क़ाबिल ग़ज़ल के है ये मेहाफ़िल
यहाँ पर सिर्फ इक मतला बहुत है।
क़लम को फेंक, माला हाथ में ले
धरम के नाम पर धन्दा बहुत है।
अकेला भी है और मजबूर भी है
वो हर इक शख़्स जो सच्चा बहुत है।
यहाँ तो और भी हैं गीत - गायक
मगर नीरज की क्यों चर्चा बहुत है।" [18]

इस ग़ज़ल में काफिये के रूप में महँगा, सस्ता, अच्छा, मतला, धन्दा, सच्चा, चर्चा का प्रयोग हुआ है। इनमें 'आ' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'बहुत है' इस शब्द - समूह का प्रयोग किया गया है।

"उनका कहना है कि नीरज यह लड़कपन छोड़ो,
सुख की छाँव में चलो, दर्द का दामन छोड़ो।
अब तो तितली के परों पर भी है नज़र उनकी
अब मुनासिब है यही, दोस्तों ! चमन छोड़ो।
सारा बाज़ार ही तुमने खरीद रक्खा है,
ग़म के मारों के लिए, कुछ न तो कफ़न छोडो।
काव्य के मंचपर अब है विदूषकों का हुजूम,
अब तो बेहतर है यही, तुम भी इल्मों - फ़न छोड़ो।
सब की सब रोशनी, महलों में छिपाने वालो,
कभी गरीब के लिए भी तो इक किरन छोड़ो।
जुल्म का दौर किसी तौर भी बदले न अगर -
ज़ीस्त के वास्ते फिर ज़ीस्त का दामन छोड़ो।" [19]

उपर्युक्त ग़ज़ल में काफिये के रूप में लड़कपन, दामन, चमन, कफ़न, इल्मों

- फन, किरन, का प्रयोग हुआ है। इनमें 'अन' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'छोड़ो' इस शब्द का प्रयोग किया गया है।

"हर शख्स उनकी आँख में सोना बना रहा
मैं ही था इक जो सिर्फ़ खिलौना बना रहा।
बढ़ता रोज़ जिस्म मगर घट रही थी उम्र
'होने' के साथ - साथ 'न होना' बना रहा।
रेशन की सेज मे लिए जब गीत बिके थे
मिट्टी की पलंग अपना बिछौना बना रहा।
माथे का जो कलंक था दुनिया की नज़र में
माँ की नज़र में मेरा डिठौना बना रहा।
इंसानियत के गज़ से जब नापा गया जनाब
जिसका बड़ा या क़द वही बौना बना रहा।
कितने ही दर्शनों की पड़ी उस प' उड़के धूल
क्या रूप था कि फिर भी सलोना बना रहा।" [20]

प्रस्तुत ग़ज़ल में काफिये के रूप में सोनां, खिलौना, होना, बिछौना, डिठौना, बौना, सलोना का प्रयोग हुआ है। इनमें 'ओना' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'बना रहा' इस शब्द - समूह का प्रयोग किया गया है।

"जो कलंकित कभी नहीं होते
वो तो वन्दित कभी नहीं होते।
जिनको घायल किया न काँटों ने
वो सुगन्धित कभी नहीं होते।
लोग करते न गर हमें बदनाम
हम तो चर्चित कभी नहीं होते।
'ढाई आखर' बिना पढ़े जग में
ज्ञानी पण्डित कभी नहीं होते।
फूल की उम्र गर बड़ी होती
भृंग मोहित कभी नहीं होते।
सिर्फ आवाज़ ही बदलती है
स्वर तिरोहित कभी नहीं होते।" [21]

इस ग़ज़ल में काफिये के रूप में कलंकित, वन्दित, सुगन्धित, चर्चित, पण्डित, मोहित, तिरोहित का प्रयोग हुआ है। इनमें 'इत' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'कभी नहीं होते' इस शब्द - समूह का प्रयोग किया गया है।

"ज़िन्दगी से निबाह करना पड़ा
इसलिए ही गुनाह करना पड़ा।
वक़्त ऐसा भी हम प' गुज़रा जब
आह भर भरके वाह करना पड़ा।

उनकी महफ़िल में रोशनी के लिए
कितनों को आत्मदाह करना पड़ा।
अर्थ - वेदी प' भावनाओं को
आँसुओं से विवाह करना पड़ा।
दिल के क़ानून की अदालत में
ग़म को अपना गवाह करना पड़ा।
चन्द गीतों की ज़िन्दगी के लिए
ज़िन्दगी को तबाह करना पड़ा।'' [22]

उपर्युक्त ग़ज़ल में काफिये के रूप में निबाह, गुनाह, वाह, आत्मदाह, विवाह, गवाह, तबाह का प्रयोग हुआ है। इनमें 'आह' स्थायी अक्षर हैं। और रदीफ के रूप में 'करना पड़ा' इस शब्द - समूह का प्रयोग किया गया है। इसप्रकार नीरज जी की ग़ज़ल में रदीफ - काफिया का प्रयोग हुआ है।

''करने चले थे होम मगर हाथ जल गये
हम यूँ हँसे कि आँख से आँसू निकल गये।
दिखते हैं सबसे पीछे यहाँ आज वो ही लोग
मरने के दिन जो मौत से आगे निकल गये।
वो दिन जो ज़िन्दगी के गुज़ारे तेरे बग़ैर
कुछ अश्क बन गये तो कुछ गीतों में ढल गये।
है इश्क़ जिसका नाम वो इक ऐसी आग हैं
जो भी बुझाने आये इसे ख़ुद वो जल गये।
इस कारवाने - क़ौम की इतनी है दास्ताँ
रस्ते वही हैं सिर्फ़ मुसाफ़िर बदल गये।
नीरज का हाल कोई जो पूछे बताइयो
हम तो वही हैं आज भी पर वो बदल गये।'' [23]

प्रस्तुत ग़ज़ल में काफिये के रूप में जल, निकल, ढल, बदल का प्रयोग हुआ है। इनमें 'अल' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'गये' इस शब्द का प्रयोग किया गया है।

''... कि दूर - दूर तलक एक भी दरख़्त न था,
तुम्हारे घर का सफ़र पहले इतना सख़्त न था।
हम इतने लीन थे तैयारियों में जाने की
वो सामने थे, उन्हें देखने का वक़्त न था।
लुटा के अपनी खुशी जिसने चुन लिये आँसू
वो बादशाह था, गो उस पे ताज़ो तख़्त न था।
जो जुल्म सह के भी चुप रह गया, न खौल उठा
वो और कुछ हो मगर आदमी का रक्त न था।
उन्हीं फकीरों ने बदली है वक़्त की धारा
कि जिनके पास खुद अपने लिए भी वक़्त न था।

शराब करके पिया उसने ज़हर जीवन - भर
हमारे शहर में नीरज - सा कोई मस्त न था।" [24]

इस ग़ज़ल में काफिये के रूप में दरख़्त, सख़्त, वक़्त, तख़्त, रक़्त, मस्त का प्रयोग हुआ है। इनमें 'त' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'न था' इस शब्द - समूह का प्रयोग किया गया है।

"कहानी बनके जिये हम तो इस ज़माने में
लगेंगी आपको सदियाँ हमें भुलाने में।
न जिनको पीना भी आये न पिलाना आये
शरीफ़ ऐसे भी आ बैठे हैं मैखाने में।
ग़रीब क्यों न रहे देश की सारी बस्ती
हैं क़ैद खुशियाँ सभी एक ही घराने में।
न आग फेंको मेरे मुस्कराते फूलों पर
मिलेगी ऐसी न खुशबू किसी ख़ज़ाने में।
जो रोते दिल को हँसाने में इबादत होती
बड़ी है उससे इबादत कहाँ ज़माने में।
गिरी हैं बिजलियाँ कुछ ऐसी चमन पर अपने
कि अब तो बच्चे भी डरते हैं मुस्कराने में।" [25]

उपर्युक्त ग़ज़ल में काफिये के रूप में जमाने, भुलाने, मैखाने, घराने, ख़जाने, जमाने, मुस्कराने का प्रयोग हुआ है। इनमें 'आने' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'में' शब्द का प्रयोग किया गया है।

"तमाम उम्र मैं इक अजनबी के घर में रहा
सफ़र न करते हुए भी किसी सफ़र में रहा।
वो जिस्म ही था जो भटका किया ज़माने में
हृदय तो मेरा हमेशा तेरी डगर में रहा।
तू ढूँढ़ता था जिसे जाके बृज में गोकुल में
वो श्याम तो किसी मीरा की चश्मे - तर में रहा।
जो गीत बाँटता फिरता था सारी दुनिया में
किसे पता है वो किन आँसूओं के घर में रहा।
वो और ही थे जिन्हें थी ख़बर सितारों की
मेरा ये देश तो रोटी की ही ख़बर में रहा।
हजारों रत्न थे उस जौहरी की झोली में
उसे कुछ भी न मिला जो अगर - मगर में रहा।" [26]

प्रस्तुत ग़ज़ल में काफिये के रूप में घर, सफर, डगर, तर, खबर, मगर का प्रयोग हुआ है। इनमें 'अर' स्थायी अक्षर है। और रदीफ के रूप में 'में रहा' इस शब्द - समूह का प्रयोग किया गया है।

इसप्रकार से नीरज जी ने अपनी सभी ग़ज़लों में काफिया और रदीफ का प्रयोग किया है। उनकी सभीं ग़ज़लें प्रभावी और भावानुकूल जान पड़ती हैं।

5.1.3 नीरज की ग़ज़लों में संगीतात्मकता :-

ग़ज़ल और संगीत का आपस में जो संबंध है, वह दिखाने का कार्य संगीतात्मकता में किया गया है। ग़ज़ल में बहर एक ऐसा तत्व है, जिससे संगीत ग़ज़ल के नजदिक आ जाता है। कवि नीरज जी ने कई फिल्मों के लिए गीत लिखें हैं। अतः उनकी ग़ज़लों को फिल्मों में स्थान मिलना कोई विशेष बात नही है। एक तो ग़ज़ल को पेश करने के कई ढंग हैं और उनके अनुसार ही ग़ज़ल का निर्माण किया जाता है। तो हर ग़ज़ल का संगीत के साथ संबंध है, ऐसा कहना गलत साबित नहीं होगा। दूसरी बात यह है कि, कवि नीरज जी ने अपनी ग़ज़लों को सम्मेलनों में ज्यादातर गाकर ही पेश किया है, तो उनमें संगीतात्मकता का होना स्वाभाविक है।

कम शब्दों का प्रयोग करके सारगर्भित विचारों को प्रकट करना, किसी गलत बातपर आघात करना या लोगों के हृदय को छू लेना ग़ज़ल की विशेषता मानी जाती है। और किसी काव्य को संगीत का जोड देते समय उसमें कम शब्दों का होना आवश्यक होता है। क्योंकि काव्य को सूरों से सजाते समय संगीतकार को अपने पसंदीदा सूर लगाने में सहायता प्रदान करनी है। संगीतकार भी समय के साथ चलकर रचना को लोगों के दिलों - दिमाग - पर इसप्रकार से हावी कर देता है कि वह रचना अजरामर बन जाती है। चाहे कितने भी सालों के बाद हम वह गीत क्यों न सूने, उसके शब्द अपने - आप ही ओठोंपर थिरकने लगते हैं।

अब आप समझ गये होंगे कि, काव्य को गीत के रूप में साकार करने के लिए जिन बातों का होना आवश्यक माना जाता है, वह सभी बातें ग़ज़ल में पहले से ही मौजुद होती है। अतः ग़ज़ल को संगीत का साथ मिलने में अधिक कठिनाई नही होती। इसके साथ ही यह बात भी महत्वपूर्ण है कि, ग़ज़ल के चहैते भी मौजुद है। अब नीरज जी की ग़ज़लों में वह सभी बातें होने के कारण उनकी ग़ज़लों के चाहनेवाले पहले से ही मौजूद हैं। और ग़ज़लों को नीरज जी ने गाकर सुनाया है, तो उनमें संगीतात्मकता भी है।

निष्कर्ष :-

प्रस्तुत अध्याय में हम ने कवि नीरज जी की ग़ज़लों का शिल्पविधान देखा। जिसमें नीरज जी की ग़ज़लों की भाषा महत्वपूर्ण मानी जाती है। हिंदी के साथ - साथ उर्दू शब्दों का प्रयोग करना उनकी खासियत रही है। सरल स्वाभाविक भाषा, संगीतात्मक भाषा, सहज भाषा, असहज भाषा, प्रतिकात्मक भाषा, सुसंस्कृत एवं नागरिक भाषा, लोकभाषा, माधुर्य गुण संपन्न भाषा आदि भाषा के विविध रूपों को प्रयोग उन्होंने अपनी ग़ज़लों में किया है। इसके साथ ही, उनकी ग़ज़लों में रदीफ-काफिया देखने को मिलता है। नीरज जी की ग़ज़लों में संगीतात्मकता भी है। इन सब बातों को देखने के पश्चात, उनकी ग़ज़लों का प्रभावी होना स्वाभाविक जान पड़ता है। इसीकारण कवि नीरज जी की ग़ज़लों को पाठक काफी चाव के साथ पढ़ते हैं और अपने जीवन के अनेक उतार - चढ़ाव महसूस करते हैं।

संदर्भ सूची

1 नीरज का काव्य : एक विश्लेषण - डॉ. दुर्गा शंकर मिश्र - नृ.234 - हिन्दी साहित्य भंडार, लखनऊ - मार्च 1979

2 कारवाँ गुजर गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.111 112 - हिन्दी पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996

3 नीरज की पाती - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.112 - हिन्दी पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1999

4 हिंदी ग़ज़ल की नई दिशाएँ - सरदार मुजावर - पृ.126, 127 - राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज नई, दिल्ली - 2000

5 कारवाँ गुज़र गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.109, 110 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996

6 कारवाँ गुजर गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.125, 126 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996

7 नीरज की पाती - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.121 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1999

8 नीरज की पाती - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.130 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1999

9 नीरज की पाती - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.128, 129 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1999

10 नीरज का काव्य : एक विश्लेषण - डॉ. दुर्गा शंकर मिश्र - पृ.242 - हिन्दी साहित्य भंडार, लखनऊ - मार्च 1979

11 कारवाँ गुजर गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.131 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996

12 साठोत्तरी हिन्दी ग़ज़ल - डॉ.मधु खराटे - पृ.15 - विद्या प्रकाशन, कानपूर - 2002 ई.

13 कारवाँ गुजर गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.113, 114 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996

14 साठोत्तरी हिन्दी ग़ज़ल - डॉ. मधु खराटे - पृ.15 - विद्या प्रकाशन, कानपूर - 2002 ई.

15 नीरज की पाती - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.127 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1999

16 हिन्दी के प्रसिद्ध गीतकार नीरज - सं. सुदर्शन चोपडा - पृ.174, 175 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1976

17 कारवाँ गुजर गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.119, 120 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996

18 नीरज की पाती - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.131 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1999

19 हिन्दी के प्रसिद्ध गीतकार नीरज - सं.सुदर्शन चोपडा - पृ.176, 177 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1976

20 कारवाँ गुजर गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.121, 122 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996

21 नीरज की पाती - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.135, 136 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1999

22 कारवाँ गुजर गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.123, 124 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996

23 नीरज की पाती - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.137, 138 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1999

24 कारवाँ गुजर गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.131, 132 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996

25 नीरज की पाती - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.143, 144 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1999

26 कारवाँ गुजर गया - गोपालदास सक्सेना 'नीरज' - पृ.133, 134 - हिन्द पॉकेट बुक्स, दिल्ली - 1996